...ीय संस्कृति

का

आधार

अपि स्वर्णमयी लङ्का न मे लक्ष्मण रोचते ।
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ॥

मर्यादा पुरुषोत्तम राम

लेखक

पं० जितेन्द्रियाचार्य

भारतीय विद्या प्रकाशन

पो० बा० नं० १०८ कचौड़ीगली,
वाराणसी ।

भारतीय संस्कृति का आधार

(अर्थात् प्रत्येक भारतीय के लिए जानने योग्य बातें)
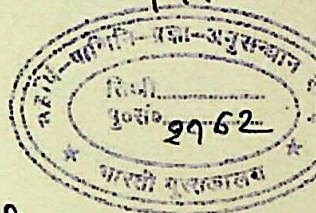
भूमिका-माननीय श्री श्रीप्रकाशजी

लेखक पं० श्री जितेन्द्रियाचार्य

प्रकाशक :

भारतीय विद्या प्रकाशन

वाराणसी

प्रकाशक :
भारतीय विद्या प्रकाशन
पो० ब० १०८, कचौड़ीगली,
वाराणसी–१

प्रथम संस्करण २६ जनवरी १९६८
मूल्य ७५ पैसे

मुद्रक :
नरेन्द्र कुमार प्राणलाल आचार्य
आचार्य प्रेस, कर्णघंटा, वाराणसी।
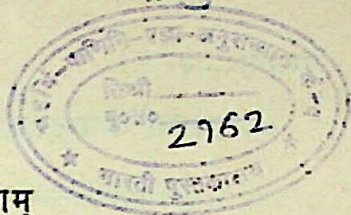
सम्मति—१

श्रीगुरुः शरणम्

'शास्त्ररत्नाकर' 'पद्मभूषण' 'पण्डितराज' के २०/१५४, राजमन्दिर
श्रीराजेश्वरशास्त्री द्राविड़ वाराणसी–१

"हृद्यं यत् स्याद्यदोजस्यं स्रोतसां यत् प्रसादनम् ।
तत्तद् यत्नेन संसेव्यं प्रशमो ज्ञानमेव च ॥"

इत्यायुर्वेदे चरकसंहितायां विद्याशमयोः ओजोवर्धकत्वस्य प्रतिपादितत्वात् प्रत्यक्षपरोक्षानुमानलक्षणप्रमाणत्रयनिर्गीतिष्टसाधनताककर्मानुष्ठानरूपाया नीतेः ओजोवर्धकत्वं तद्द्वारा समस्तदुःखनिर्हरणक्षमत्वं च ज्ञायते ।

'सुनिपुणमुपसेव्य सद्गुरुं शुचिरनुवृत्तिपरो विभूतये ।
भवति हि विनयोपसंहितो नृपतिपदाय शमाय च क्षमः ॥'

इति नीतिसारपद्यमपीदमेवानुवदति । अतो भारतवर्षीयाणां सर्वेषामपि स्त्रीपुरुषाणां सदाचारपरिज्ञानं सर्वविधश्रेयस्करम् , अधुना धर्मनिरपेक्षाया राजनीतेस्तत्रोदासीनत्वात्प्रजायाः कर्तव्यतां गतं, श्रीमद्भिः सुगृहीतनामधेयैः पं० श्रीजितेन्द्रियाचार्यैः कृतं 'भारतीय संस्कृति का आधार' पुस्तकम् अस्मिन् कर्मणि उपादेयमेव सर्वेषामेवास्तिकजनानामिति सहर्षं निवेदयामि । श्रीमान् आचार्यमहोदयः अनेन कार्येणास्तिकजनानामुत्तमर्णतां गतः परमेश्वरकृपया निखिलश्रेयोभाग् भूयादित्याशासे । इति—

राजेश्वरशास्त्री द्राविड़ः

दिनाङ्क ९-१२-६७

सम्मति—२

आचार्यप्रवर श्रीचन्द्रशेखर शास्त्रीजी

प्रधानाचार्य श्री बलदेवसहाय संस्कृत महाविद्यालय, कानपुर

काशी के सुयोग्य विद्वान् श्री जितेन्द्रियाचार्यजी द्वारा लिखित 'भारतीय संस्कृति का आधार' नामकी पुस्तक को देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई। इसमें भारतीय संस्कृति से सम्बद्ध सभी विषयों का ज्ञान संक्षेप में सुचारु रूपसे कराया गया है। इसको लिखकर विद्वान् लेखकने गागर में सागर भरने की उक्ति को चरितार्थ किया है। पुस्तक बड़े परिश्रम से लिखी गई है, यह सर्वथा उपादेय है। मैं इसका सर्वत्र प्रचार चाहता हूँ।

चन्द्रशेखर शास्त्री

दि० ११-१-६८

सम्मति—३

श्रीमान् डा० अमरचन्दजोशी

दिसम्बर २१, १९६७

'भारतीय सस्कृति का आधार' नामक धार्मिक पुस्तक की रचना काशी के प्रतिष्ठित विद्वान् पं० श्रीजितेन्द्रियाचार्यजीने की है। यह संग्रह उत्तम है।

बालक, बालिकायें एवं नवयुवक-वर्ग जो भारतीय संस्कृति के सम्बन्ध में प्रारम्भिक ज्ञान का लाभ उठाना चाहते हैं, उनके लिए यह पुस्तक अत्यंत उपयोगी है।

अमरचन्द जोशी

कुलपति

काशी हिन्दूविश्वविद्यालय

सम्मति—४

न्यायवेदान्ताचार्य न्यायविभागाध्यक्ष वा० सं० विश्वविद्यालय, नैयायिकप्रवर पं० श्रीबदरीनाथ शुक्लजी,

हमारी जाति के लिए वह एक बड़ा दुर्भाग्यपूर्ण दिन आया जब कुछ सौ वर्ष पूर्व हमारे देश में विदेशियों का षड्यन्त्रपूर्ण पदार्पण हुआ और अपनी असावधानी से हमें अपने ही देश में अपने ऊपर उनकी प्रभुसत्ता स्वीकार करनी पड़ी। उसका फल यह हुआ कि उनकी राजनीतिक और सामरिक श्रेष्ठता के साथ उनकी भाषा, उनका वेष, उनका रहन सहन, उनका साहित्य, उनकी सभ्यता, उनकी संस्कृति, उनका सब कुछ हमें श्रेष्ठ एवं उपादेय प्रतीत होने लगा, प्रत्येक बात में हम उनका अनुकरण करने लगे और आज यह अवस्था हो गई कि हमारे बालक, बालिकायें, विशेषकर हमारे देश के समृद्ध, समुन्नत और शिक्षित घरों की सन्तानें अपने देश की मूल भाषा, अपने देश का वेष, अपने देश के वर्ष, मास, दिन, तिथि, त्यौहार, तीर्थ, नदी, पर्वत और अपने पूर्वजों के नाम आदि बड़ी द्रुतगति से भूलने लगीं। हमारी शिक्षा विशेषकर प्रारम्भिक शिक्षा इतनी वैदेशिक हो गई कि उसमें इन सब आवश्यक बातों का समावेश ही नहीं रह गया।

इस विषम स्थिति में यह अत्यन्त आवश्यक है कि हमारी वर्तमान शिक्षा में परिवर्तन हो, हमारी आरम्भिक शिक्षा में तत्काल संशोधन हो, उसका पूर्ण भारतीयीकरण हो, उसके लिए ऐसी पुस्तकों की रचना हो जिनमें अपने देश की मूलभूत बातों का समावेश हो, जिनके अध्ययन से देश के बालक-बालिकाओं में अच्छे संस्कारों का उदय हो, अपने देश की पुरानी मान्यताओं में उनकी आस्था हो, जिनके माध्यम से उनमें सच्ची भारतीयता का विकास हो।

हर्ष का विषय है कि हमारे विद्वान् मित्र पं० श्रीजितेन्द्रियाचार्य की दृष्टि इस मौलिक और तात्कालिक आवश्यकता की ओर गई और उन्होंने 'भारतीय संस्कृति का आधार' नामक एक अत्यन्त उपयोगी पुस्तक की रचना की। इस पुस्तक में

अत्यन्त सरल और सुन्दर रीति से उक्त सभी बातों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया गया है, जिनका ज्ञान प्रत्येक भारतीय बालक-बालिका के लिए अनिवार्य रूप से अपेक्षणीय है।

शिक्षा-क्षेत्र में कार्य करने वाले सभी सज्जनों से मेरा अनुरोध है कि वे इस पुस्तक का स्वयं अवलोकन करें और इसकी सर्वसम्मत उपयोगिता को दृष्टिगत कर इसका व्यापक प्रचार करें, जिससे इसकी रचना का उद्देश्य पूरा हो सके और इसके द्वारा बालक-बालिकाओं के भारतीयीकरण के कार्य को बढ़ावा मिल सके।

मैं आचार्य जी को इस उपयुक्ततम पुस्तक की रचना के लिये अनेकानेक धन्यवाद देता हूँ।

वाराणसी — बदरीनाथ शुक्ल

२१।१२।६७

सम्मति—५

प्राच्य-पाश्चात्य शिक्षा के मार्मिक विद्वान् वाराणसेय संस्कृतविश्व-विद्यालय के उपकुलपति पं० श्रीगौरीनाथदेवशर्मा

पुस्तकं सफलं भूयाद् धर्माचारान् प्रवर्तयत्।
बाला अधीत्य सम्पुष्टसंस्काराः सन्तु नित्यशः॥

वाराणसी–२ — कामयते–

माघ कृ० ९,२०२४ — श्रीगौरीनाथ देवशर्मा

सम्मति—६

श्रीमान् पण्डित प्रकाशचन्द्रजी गौड़, व्याकरणाचार्य, एम० ए०

'भारतीय संस्कृति का आधार' नामक पुस्तक को मैंने देखा। मैं स्वयं यह कभी कभी सोचता हूँ कि हिन्दू समाज ही संसार में ऐसा है, जिसकी सन्तति अपनी प्राचीन भारतीय परम्पराओं से दूर होती जा रही है और उसे उनका ज्ञानतक ही प्रायः नहीं रह गया है। इस पुस्तक से इस अभाव की पूर्ति होगी—ऐसा मेरा विश्वास है।

प्र० च० गौड़

प्रधान निरीक्षक, संस्कृतपाठशालायें,

उत्तरप्रदेश, इलाहाबाद।

दिनाङ्क २६।१२।६७

(परिशिष्ट)

गुरुजी

'गृणाति तत्त्वमिति गुरुः' छात्र को यथार्थ बात समझाने वाले गुरु हैं, न कि किसी न किसी रूप में। और एक रूप से गुरु शब्दका निर्वचन है—'गु-शब्दस्त्वन्धकारः स्याद् रु-शब्दस्तन्निरोधकः'। शिष्यके अज्ञान को हटानेवाले गुरु हैं। इसीलिए गुरु का स्थान ईश्वर से भी बढ़ कर माना गया है—'ईशे रुष्टे गुरुः त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन'। अर्थात् ईश्वर कुपित हो जाय तो गुरुजी बचालेंगे, यदि गुरुजी रुष्ट हो जाएँ तो कोई नहीं बचा सकता।

छात्र

"छत्रं=गुरुदोषाच्छादनं शीलमस्य=छात्रः" अर्थात गुरुजी के दोष को छिपाने वाला 'छात्र' है। यदि गुरुजीमें कोई दोष हो भी, उसे छिपाने वाला छात्र है।

४ प्रकार के पुत्र

"उत्तमश्चिन्तितं कुर्यात् प्रोक्तकारी तु मध्यमः।
अधमोऽश्रद्धया कुर्यात् अकर्तोच्चरितं पितुः॥" (भागवत)

पिता के मनकी बातको करनेवाला पुत्र उत्तम है। कहनेपर करनेवाला मध्यम है। अनादर-बेमन से करनेवाला अधम है। नहीं करनेवाला शरीर से निकले मल-मूत्र के सदृश है।

—:※:—

भूतपूर्व महामहिम राज्यपाल माननीय

श्री श्रीप्रकाशजी

सेवाश्रम
वाराणसी–१
१७, ११, १९६७

भूमिका

जैसा कि यूनानी दार्शनिक अरस्तूने कहा है, मनुष्य सामाजिक जन्तु है। वह अकेला नहीं रह सकता। भिन्न भिन्न देशों में और भिन्न भिन्न समय पर उसने किसी न किसी प्रकारका समाज अपने लिए संघटित किया। इसको उसने विशेष नाम और विशेष रूप दिया। इसका सबसे अधिक दृढ और प्रभावशाली संघटन किसी धर्मविशेषके नाम और रूपमें हुआ। इसके द्वारा लौकिक आचार और आध्यात्मिक विचार निर्धारित किया गया। इसे ही उसका आधारस्तंभ मानना चाहिए।

जिसे आज हिन्दु धर्म कहते हैं, उसके अन्तर्गत बहुतसे संप्रदाय हैं। इन सबके ही आचार-विचारमें अन्तर पाया जाता है। समयकी गतिसे यह अन्तर बढ़ता ही गया। ऐसी अवस्थामें हिन्दु धर्मावलम्बियों में बाह्य-दृष्टिसे, एकताकी बड़ी कमी पायी जाती है। परिणाम यह हुआ कि हिन्दुधर्मके विभिन्न सम्प्रदायों में कोई समता नहीं रही। एक प्रकारकी अराजकता फैल गयी।

अन्य धर्मावलम्बियोंमें देखा जाता है कि उनके अपने संस्कारविशेष होते हैं, जिनका प्रवेश उनके बालक-बालिकाओंमें छोटी ही अवस्थामें हो

जाता है, और जिनका प्रभाव अमिट रूपसे उनके हृदय और मस्तिष्क-पर आजीवन रहता है। उन्हींके अनुकूल उनके आचार-विचार सदा बने रहते हैं। हम हिन्दुओंमें समताके अभावके कारण, सब बालक-बालिकाओं, नवयुवक-नवयुवतियोंका पालन-पोषण किसी संस्कार विशेषके अनुसार नहीं होता। देखनेमें तो यह आ रहा है कि बहुतमें, विशेषकर तथाकथित शिक्षित कुटुम्बोंमें किसी भी अच्छे संस्कारका सन्निवेश है ही नहीं। इससे बड़ा अनर्थ हो रहा है।

इस समय संसारमें विचारोंका बड़ा संघर्ष है। बहुतसे ऐसे लोग भी हैं जो परलोक आदि में विश्वास न कर धर्मको ही व्यर्थ मानते हैं, और पृथ्वीपर मनुष्यके सुचारु रूपसे जीवन निर्वाहके लिए किन्हीं लौकिक आधारका आश्रय पर्याप्त समझते हैं। पर ये भी अपने परम्परा-गत धर्मके मूलतत्त्वोंसे परिचित रहते हैं, और उनके प्रतिदिनके जीवनपर इनका प्रभाव अनिवार्य रूपसे पड़ता ही है।

हम हिन्दुओंके संबंधमें यह नहीं कहा जा सकता। अपने धर्मकी तरफ जो लोग उदासीन हैं, वे अपनी परम्पराओंसे भी अनभिज्ञ हैं। उन्हें वे भूल गये हैं। सच्ची बात तो यह है कि हमारी अनेकतामें ही आन्तरिक एकता है। पर अनेकता पर ही जोर देनेके कारण हमारी वास्तविक एकता लुप्त हो गयी है। इसका पुनरुद्धार करना बहुत आवश्यक है। इसी विचारसे मैं बालक-बालिकाओंके लिए लिखित इस 'भारतीय-संस्कृति का आधार' नामक पुस्तकका हृदयसे स्वागत करता हूँ, क्योंकि इसमें हमारे धर्म, हमारी परम्परा, और हमारे आचार-विचारकी मूल बातोंका संग्रह किया गया है और उनका प्रतिपादन सरल प्रकारसे और सरल भाषामें हुआ है।

यह तो मानी हुई बात है कि जो संस्कार बाल्यावस्थामें पड़ जाते हैं वह छूटते नहीं। इस कारण उचित है कि छोटी ही अवस्थामें बालक-

बालिकाओंको हम अपनी परंपरागत संस्कारोंसे परिचित करा दें। आगे चलकर अन्य प्रचलित प्रभावों, विचारशैलियों, कार्यप्रणालियोंके कारण उनमें विचार चाहे कुछ ही क्यों न हो जाँय, पर प्रारंभिक अवस्थामें अपने पूर्वजों द्वारा प्रतिपादित आचार-विचारका ज्ञान उन्हें अवश्य रहना चाहिए। उन्हें जो कुछ हमें बताना है, उसे सरल भाषामें ही प्रकट करना होगा। उसका रूप भी मनोहर, हृदयग्राही और आकर्षक होना चाहिए। यदि ऐसा न हुआ कि बालक-बालिकाएँ उसे ग्रहण न कर सकेंगी, न हमारे उद्देश्य की सिद्धि ही होगी।

इस पुस्तकके विज्ञ लेखक पण्डित श्री जितेन्द्रियाचार्यजीने बड़े परिश्रमसे हमारे धर्मके मूलतत्त्वोंकी विवेचना की है, और हमारे भिन्न-भिन्न समाजोंमें प्रचलित आचार-विचारोंका सूक्ष्मरूपसे अध्ययन कर उनका संग्रह किया है। छोटे छोटे बच्चोंके योग्य ही उन्होंने इस पुस्तककी रचना की है। मैं इसके लिए उन्हें हृदयसे बधाई और धन्यवाद देता हूँ। मेरी शुभ कामना है कि इसका अच्छा प्रचार हो और इसके द्वारा दिन प्रतिदिन अधिकाधिक बालक-बालिकाएँ, नवयुवक-नवयुवतियाँ ही नहीं, पर प्रौढ स्त्री-पुरुष भी जो अपने धर्मके साथ साथ अपनेको ही भूल गये हैं, पूरी तरहसे लाभ उठावें, देशमें सच्चा स्वराज्य स्थापित करने में सहायक हों, और अपनी वास्तविक एकता और अखण्डताको अक्षुण्ण बनाये रहें।

श्रीप्रकाश

सेवाश्रम,
वाराणसी–१

दो शब्द

हमारे पूर्वजों के परंपरागत एवं श्रेयस्कर कुछ संस्कारों को नई पीढ़ी के बालक-बालिकाओं में प्रचलित कराने के उद्देश्य से यह लघु पुस्तक लिखी गई। विदेशी अंग्रेज़ी एवं अंग्रेजी-संस्कारों को हटाकर हमें स्वदेशीय अच्छे-अच्छे परंपरागत संस्कारों को अपनाना तथा उन्हें भारत में पुनः प्रतिष्ठित करना ही मंगलकर होगा। प्रबल समय के प्रवाह से प्रभावित हमारी भारतीय आधुनिक पीढ़ी संस्कृत वाङ्मय के खजाने में विद्यमान अनेक ग्रन्थरत्नों के नाम से भी अपरिचित है। अधिक हमारे आदरणीय सौजन्य के प्रतिमूर्ति एवं काशीनगर के आनुवंशिक संभ्रान्त नागरिक श्री श्रीप्रकाशजीने भूमिका में स्पष्ट किया है। इसके लिए मैं उनका अत्यन्त आभारी हूँ।

इस पुस्तक में अपनी बहुमूल्य संमति देकर हमें अनुगृहीत करनेवाले मनीषिमूर्धन्यों का हम अत्यन्त उपकृत तथा आभारी हैं। इसकी पाण्डुलिपि पर ही कण्ठतः आशीर्वादाभिनन्दन करने वाले संस्कृतजगत् में विख्यात पण्डितवर शृंगेरी श्रीरामचन्द्रशास्त्रीजी एवं वेदान्त-मीमांसाचार्य मीमांसकवरिष्ठ श्रीसुब्रह्मण्य शास्त्रीजी का० हि० वि० वि० के प्रति में हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। संस्कृत-संस्कृतिनिष्ठ 'गाण्डीवम्' के यशस्वी सम्पादक श्रीरामबालक शास्त्रीजी के संमुख कृतज्ञता से मैं बद्धाञ्जलि हूँ। हमारे सुहृत प्रसिद्ध समाजसेवी पं० श्रीगोपालाचार्य टोणपेजी हमारे हार्द आभार के पात्र हैं।

म० प्रदेश के कर्मठ स्वामी श्रीऋषिकुमारजी को मैं भूरि-भूरि धन्यवाद देता हूँ, जिन्होंने साद्योपान्त, एक ही साँस में, इस पुस्तक को

पढ़कर बड़े हर्ष के साथ, यत्र तत्र अच्छी राय देने का सौजन्य प्रदर्शित किया था।

यहाँ पर मुझे प्रोत्साहित करनेवाले अपने मित्र व्याकरणाचार्य श्री पं० विश्वनाथ झा का स्मरणपथ में रखना आवश्यक समझता हूँ। इस पुस्तक की पाण्डुलिपि प्रस्तुत कर इसके संशोधन में भी हाथ बटानेवाले अपने चि० श्रीमाधवाचार्य बी० एस-सी० को शुभ आशीर्वाद प्रदान करता हूँ।

स्वल्प समय में ही अपूर्व संस्कृत पुस्तकों को प्रकाशित कर प्रसिद्ध प्रकाशकों के बीच अपने स्थान को आरक्षित रखनेवाले, उत्साहैकधन एवं विनयावदात श्री किशोर चन्द जी को मैं अनेक शुभाशीर्वाद देता हूँ, जिन्होंने इस पुस्तक के प्रकाशन में पूर्ण तत्परता से कार्य किया है।

पर्यन्त में 'विश्वनाटक' के कुशल सूत्रधार सर्वसमर्थ परमात्मा से करबद्ध प्रार्थना करता हूँ—'हे भगवन्! आप की मंगलमय लीला के अंगण भारत भूमिपर आपका कृपास्निग्ध कटाक्ष सन्तत बना रहे और भारतवासी अपने हृदय से आपको कभी ओझल न होने दें'—

विद्वानों का आश्रव

जितेन्द्रियाचार्य

पूर्णिमा, मकरसंक्रमण २०२४,

काशी।

———

विषय सूची

—:&:—

भारतीय संस्कृति का आधार

[१] प्रातःकाल स्मरणीय श्लोक

(इन श्लोकों को प्रातः उठते ही बालक बालिकाएँ पढ़ें और प्रतिदिन पाठ करने का अभ्यास डालें)

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द उत्तिष्ठ गरुडध्वज ।
उत्तिष्ठ कमलाकान्त त्रैलोक्यं मङ्गलं कुरु ॥ १ ॥

मङ्गलं भगवान् विष्णुः मङ्गलं मधुसूदनः ।
मङ्गलं पुण्डरीकाक्षः मङ्गलायतनं हरिः ॥ २ ॥

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च ।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥ ३ ॥

पृथिवी की प्रार्थना

समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डले ।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ॥ ४ ॥

गुरुजी की वन्दना

गुरुः ब्रह्मा गुरुः विष्णुः गुरुः देवो महेश्वरः ।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ५ ॥

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत् पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ६ ॥

हथेली का दर्शन

कराग्रे वसते लक्ष्मीः करमध्ये सरस्वती ।
करमूले तथा गौरी प्रभाते करदर्शनम् ॥ ७ ॥

प्रातः दर्शनीय वस्तुएँ

कपिलां दर्पणं धेनुं भाग्यवन्तञ्च भूपतिम् ।
आचार्यम् अन्नदातारं प्रातः पश्येद् बुधो जनः ॥ ८ ॥

प्रातः वन्दनीय

प्रातःकाले पिता माता ज्येष्ठभ्राता तथैव च ।
आचार्याः स्थविराश्चैव वन्दनीया दिने दिने ॥ ९ ॥

बालरूपी मुकुन्द का वन्दन

करारविन्देन पदारविन्दम् मुखारविन्दे विनिवेशयन्तम् ।
वटस्य पत्रस्य पुटे शयानम् बालं मुकुन्दं मनसा स्मरामि ॥१०॥

श्रीकृष्ण का वन्दन

वंशीविभूषितकरात् नवनीरदाभात्,
पीताम्बरात् अरुणबिम्बफलाधरोष्ठात् ।
पूर्णेन्दुसुन्दरमुखात् अरविन्दनेत्रात्,
कृष्णात् परं किमपि तत्त्वमहं न जाने ॥ ११ ॥

कृष्णाय वासुदेवाय देवकीनन्दनाय च ।
नन्दगोपकुमाराय गोविन्दाय नमो नमः ॥ १२ ॥

श्रीराम का वन्दन

नीलाम्बुजश्यामलकोमलाङ्गं सीतासमारोपितवामभागम् ।
पाणौ महासायकचारुचापम् नमामि रामं रघुवंशनाथम् ॥१३॥

श्रीशंकरजी का वन्दन

कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्रहारम् ।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानीसहितं नमामि ॥ १४ ॥

दुर्गाजी का वन्दन

सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १५ ॥
शरणागत-दीनार्त-परित्राण-परायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१६॥
दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः,
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या,
सर्वोपकारकरणाय सदाऽऽर्द्रचित्ता ॥ १७ ॥

लक्ष्मीजी की वन्दना

पद्मासनस्थिते नित्यं धनधान्यप्रवर्धिनि ।
नारायणप्रिये देवि महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते ॥ १८ ॥
सिद्धिबुद्धिप्रदे देवि भुक्तिमुक्तिप्रदायिनि ।
मन्त्रमूर्त्ते सदादेवि महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते ॥१९॥

गङ्गा की प्रार्थना

नमामि गङ्गे तव पादपङ्कजं सुरासुरैर्वन्दितदिव्यरूपम् ।
भुक्तिं च मुक्तिं च ददासि नित्यं भावानुसारेण सदा नराणाम् ॥२०

सरस्वती की प्रार्थना

सरस्वति नमस्तुभ्यं वरदे कामरूपिणि ।
विद्यारम्भं करिष्यामि सिद्धिर्भवतु मे सदा ॥ २१ ॥
नमस्ते शारदे देवि काश्मीरपुरवासिनि ।
त्वामहं प्रार्थये देवि विद्यादानञ्च देहि मे ॥ २२ ॥

गणेशजी की प्रार्थना

वक्रतुण्ड महाकाय सूर्यकोटिसमप्रभ ।
अविघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ॥ २३ ॥
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्याये सर्वविघ्नोपशान्तये ॥ २५ ॥

हनुमानजी की प्रार्थना

मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शिरसा नमामि ॥२५॥

(वाल्मीकिजी के मुखसे अचानक निकला आदिम श्लोक)

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वम् अगमः शाश्वतीः समाः ।
यत् क्रौञ्चमिथुनाद् एकम् अवधीः काममोहितम् ॥२६॥

(सुमित्रा का लक्ष्मण के लिये उपदेश)

रामं दशरथं विद्धि मां विद्धि जनकात्मजाम् ।
अयोध्याम् अटवीम् विद्धि गच्छ तात यथासुखम् ॥ २७ ॥

परमेश्वर प्रार्थना

त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव त्वमेव सर्वं मम देवदेव ॥२८॥

पिता माता गुरुः भ्राता सखा बन्धुः त्वमेव मे ।
विद्या सत्कर्म वित्तञ्च पुरस्पृष्ठे च पार्श्वयोः ॥२९॥

एकश्लोकी रामायण

आदौ रामतपोवनादिगमनं हत्वा मृगं काञ्चनम्
वैदेहीहरणं जटायुमरणं सुग्रीवसम्भाषणम् ।
बालीनिर्दलनम् समुद्रतरणं लङ्कापुरीदाहनम्
पश्चाद् रावणकुम्भकर्णमथनम् एतद्धि रामायणम् ॥ ३० ॥

एकश्लोकी श्रीमद्भागवत

आदौ देवकिदेविगर्भजननम् गोपीगृहे वर्धनम्
मायापूतनिजीवितापहरणम् गोवर्धनोद्धारणम् ।
कंसच्छेदनकौरवादिमथनम् कुन्तीसुतापालनम्
एतद् भागवतमहापुराणपुण्यकथितम् श्रीकृष्णलीलामृतम् ॥३१॥

एकश्लोकी महाभारत

आदौ पाण्डवधार्तराष्ट्रजननम् लाक्षागृहे दाहनम्
द्यूते श्रीहरणं वने विचरणं मात्स्यालये वर्तनम् ।
लीलागोग्रहणं रणे विहरणं संधिक्रियाजृम्भणम्
पश्चाद् भीष्मसुयोधनादिनिधनम् एतन्महाभारतम् ॥ ३२ ॥

भारतवर्ष का महत्त्व

गायन्ति देवाः स्तुतिगीतकानि धन्यास्तु ये भारतभूमिभागे ।
स्वर्गापवर्गास्पदमार्गभूते भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात् ॥३३॥
अत्रापि भारतं श्रेष्ठं जम्बूद्वीपे महामुने ।
यतो हि कर्मभूरेषां ह्यतोऽन्या भोगभूमयः ॥ ३४ ॥
अहो भुवः सप्तसमुद्रवत्याः द्वीपेषु वर्षेष्वधिपुण्यमेतत् ।
गायन्ति यत्रत्यजना मुरारेः कर्माणि भद्राण्यवतारवन्ति ॥३५॥
अहो अमीषां किमकारि शोभनं प्रसन्न एषां स्विदुत स्वयं हरिः ।
यैर्जन्म लब्धं नृषु भारताजिरे मुकुन्दसेवौपयिकं स्पृहा हि नः ॥३६

नवग्रहस्तोत्र

(स्नान करने के बाद नीचे के श्लोकों को पढ़े तो अच्छा रहेगा)

सूर्यग्रह जपाकुसुम-संकाशम् काश्यपेयं महाद्युतिम् ।
ध्वान्तारिं सर्वपापघ्नम् प्रणतोऽस्मि दिवाकरम् ॥ १ ॥

चन्द्रग्रह दधिशङ्खतुषाराभम् क्षीरोदार्णव-सम्भवम् ।
नमामि शशिनं भक्त्या शम्भोर्मुकुटभूषणम् ॥ २ ॥

मङ्गलग्रह धरणीगर्भसम्भूतम् विद्युत्कान्तिसमप्रभम् ।
कुमारं शक्तिहस्तञ्च मङ्गलं प्रणमाम्यहम् ॥ ३ ॥

बुधग्रह प्रियङ्गुगुलिकाभासम् रूपेणाप्रतिमं बुधम् ।
सौम्यं सौम्यगुणोपेतम् नमामि शशिनन्दनम् ॥ ४ ॥

गुरुग्रह देवानाञ्च ऋषीणाञ्च गुरुं काञ्चनसन्निभम् ।
वन्द्यञ्च त्रिषु लोकेषु प्रणमामि बृहस्पतिम् ॥ ५ ॥

शुक्रग्रह हिमकुन्दमृणालाभम् दैत्यानां परमं गुरुम् ।
सर्वशास्त्रप्रवक्तारम् भार्गवं प्रणमाम्यहम् ॥ ६ ॥

शनैश्चर नीलाञ्जनगिरिप्रख्यम् रविपुत्रं यमाग्रजम् ।
छायामार्तण्डसूनुं च प्रणमामि शनैश्चरम् ॥ ७ ॥

राहुग्रह अर्धकायं महावीर्यम् चन्द्रादित्यविमर्दनम् ।
सिंहिकागर्भसम्भूतम् तं राहुं प्रणमाम्यहम् ॥ ८ ॥

केतुग्रह पलाशपुष्पसंकाशम् तारकाग्रहतारकम् ।
रौद्रं रौद्रात्मकं घोरम् तं केतुं प्रणमाम्यहम् ॥ ९ ॥

(तीनों देव तथा नवों ग्रहों की एक श्लोक से प्रार्थना)

ब्रह्मा मुरारिः त्रिपुरान्तकारी भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च ।
गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥

सात चिरंजीवियों का स्मरण

अश्वत्थामा बलिर्व्यासः हनूमांश्च विभीषणः ।
कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः ॥

सात ऋषियों (सप्तर्षि) का स्मरण

कश्यपोऽत्रिर्भरद्वाजो विश्वामित्रोऽथ गौतमः ।
जमदग्निर्वसिष्ठश्च सप्तैते ऋषयः स्मृताः ॥

पञ्चकन्या या पाँच पतिव्रतायें

अहल्या द्रौपदी कुन्ती तारा मन्दोदरी तथा ।
पञ्चकन्याः (पञ्चकं ना) स्मरेन्नित्यं महापातकनाशनम् ॥

१४ पुण्यपुरुष भगवद्भक्तों का स्मरण

प्रह्लाद-नारद-पराशर-पुण्डरीक-
व्यासाम्बरीष-शुक-शौनक-भीष्म-दाल्भ्यान् ।
रुक्माङ्गदार्जुन-वशिष्ठ-विभीषणादीन्
पुण्यानिमान् परमभागवतान् स्मरामि ॥

तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण—इन पांचोंको पंचांग कहते हैं। ये प्रतिदिन बदलते रहते हैं। 'पंचांग' में प्रायः इनका केवल एक एक अक्षर लिख कर '०' चिह्न दिया रहता है।

[२] १५ तिथियाँ

संस्कृत

१. प्रतिपद् २. द्वितीया ३. तृतीया ४. चतुर्थी
५. पंचमी ६. षष्ठी ७. सप्तमी ८. अष्टमी
९. नवमी १०. दशमी ११. एकादशी १२. द्वादशी
१३. त्रयोदशी १४. चतुर्दशी १५ पूर्णिमा शुक्लपक्ष में,
अमावस्या कृष्णपक्ष में ।

हिन्दी में तिथियाँ

परवा	दूज	तीज	चौथ
पंचमी	छठ	सत्तमी	अष्टमी
नौमी	दसमी	एकादसी	दुआदसी
तेरस	चौदस	पुनवासी (सुदीमें)	
		अमावस (बदीमें)	

प्रतिमास में शुक्लपक्ष (सुदी) और कृष्णपक्ष (बदी) ये दो पक्ष (पखवारे) होते हैं। शुक्लपक्ष में चंद्रमा की कला बढ़ती जाती है और कृष्णपक्ष में घटती जाती है।

[३] ७ वार

१. आदित्यवार	२. सोमवार	३. मंगलवार
४. बुधवार	५. गुरुवार (बीफे)	६. शुक्रवार
७. शनिवार (सनीचर)		

ये सात वार हैं। इन सबको मिलाकर 'सप्ताह' या 'हफ्ता' कहते हैं।

[४] २७ नक्षत्र	[५] योग	[६] करण
१. अश्विनी	१. विष्कंभ	१. बव
२. भरणी	२. प्रीति	२. बालव
३. कृत्तिका	३. आयुष्मान्	३. कौलव
४. रोहिणी	४. सौभाग्य	४. तैतिल
५. मृगशिर	५. शोभन	५. गर
६. आर्द्रा	६. अतिगंड	६. वणिज
७. पुनर्वसु	७. सुकर्मा	७. विष्टि

८. पुष्य
९. आश्लेषा
१०. मखा
११. पूर्वाफाल्गुनी
१२. उत्तरा फाल्गुनी
१३. हस्त
१४. चित्रा
१५. स्वाती
१६. विशाखा
१७. अनुराधा
१८. ज्येष्ठा
१९. मूल
२०. पूर्वाषाढा
२१. उत्तराषाढा
२२. श्रवण
२३. धनिष्ठा
२४. शतभिषा
२५. पूर्वाभाद्रा
२६. उत्तराभाद्रा
२७. रेवती
ये २७ नक्षत्र हैं।

८. धृति
९. शूल
१०. गंड
११. वृद्धि
१२. ध्रुव
१३. व्याघात
१४. हर्षण
१५. वज्र
१६. सिद्धि
१७. व्यतिपात
१८. वरीयान्
१९. परिघ
२०. शिव
२१. सिद्ध
२२. साध्य
२३. शुभ
२४. शुक्ल
२५. ब्रह्म
२६. ऐंद्र
२७. वैधृति
ये २७ योग हैं।

८. शकुनि
९. चतुष्पद
१०. नाग
११. किंस्तुघ्न
ये ११ करण हैं।

२८. उत्तराषाढा का चौथा चरण और श्रवण का पहला चरण 'अभिजित्' नक्षत्र कहलाता है।

[७] १२ महीने (चाद्रमान से)

१. चैत्र (चैत्र) २. वैशाख (वैसाख)
३. ज्येष्ठ (जेठ) ४. आषाढ (आसाढ़)
५. श्रावण (सावन) ६. भाद्रपद (भादौं)
७. आश्विन (क्वार) ८. कार्तिक (कातिक)
९. मार्गशीर्ष (अगहयन) १०. पौष (पूस)
११. माघ (माघ) १२. फाल्गुन (फागुन)

इन महीनों का आरंभ सुदी परवा (प्रतिपदा) से होता है। उत्तर भारत में बदी परवा से मासका आरम्भ माना जाता है।

[८] ६ ऋतुओं के नाम

१. वसंत—चैत्र और वैशाख मासों में।
२. ग्रीष्म—ज्येष्ठ और आषाढ़ मासों में।
३. वर्षा—श्रावण और भाद्रपद मासों में।
४. शरद्—आश्विन और कातिक मासों में।
५. हेमंत—मार्गशिर और पौष मासों में।
६. शिशिर—माघ और फाल्गुन मासों में।

[९] सौरमान से १२ मास (१२ राशि)

१. मेष २. वृषभ ३. मिथुन ४. कर्काटक
५. सिंह ६. कन्या ७. तुला ८. वृश्चिक
९. धनु १०. मकर ११. कुंभ १२. मीन

इन मासों का आरंभ संक्रांति के दूसरे दिन से होता है।

[१०] २ अयन—सूर्य के दो मार्ग

उत्तरायण:—छह मास, मकर मास से कर्क मास तक।
दक्षिणायन:—छह मास, कर्क मास से मकर मास तक।

अर्थात् सूर्य का उत्तर की ओर जाना, और दक्षिण की ओर जाना। उत्तरायण में दिन बड़ा होता है, एवं दक्षिणायन में रात बड़ी होती है।

[११] १२ अंग्रेजी महीने

जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून
जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्तूबर	नवम्बर	दिसम्बर

ये १२ अंग्रेजी महीने हैं।

[१२] ६० संवत्सर या वर्ष

१. प्रभव	२. विभव	३. शुक्ल
४. प्रमोद	५. प्रजापति	६. अंगिरा
७. श्रीमुख	८. भाव	९. युवा
१०. धातु	११. ईश्वर	१२. बहुधान्य
१३. प्रमाथी	१४. विक्रम	१५. वृष
१६. चित्रभानु	१७. स्वभानु	१८. तारण
१९. पार्थिव	२०. व्यय	२१. सर्वजित्
२२. सर्वधारी	२३. विरोधी	२४. विकृति
२५. खर	२६. नन्दन	२७. विजय
२८. जय	२९. मन्मथ	३०. दुर्मुख
३१. हेमलंबी	३२. विलंबी	३३. विकारी
३४. शार्वरी	३५. प्लव	३६. शुभकृत्
३७. शोभकृत	३८. क्रोधी	३९. विश्वावसु
४०. पराभव	४१. प्लवंग	४२. कीलक
४३. सौम्य	४४. साधारण	४५. विरोधिकृत्
४६. परिधावी	४७. प्रमादी	४८. आनंद

४९. राक्षस	५०. नल	५१. पिंगल
५२. कालयुक्त	५३. सिद्धार्थी	५४. रौद्र
५५. दुर्मति	५६. दुंदुभि	५७. रुधिरोद्गारी
५८. रक्ताक्षी	५९. क्रोधन	६०. क्षय

ये ६० वर्ष हैं। १ वर्ष १२ मास=३६० दिन का होता है।

आजकल अर्थात् १९६८ में चान्द्रमान के अनुसार (प्रायः उत्तर भारत में) ५४ वा 'रौद्र' संवत्सर है एवं सौरमान के अनुसार (प्रायः द० भारत में) ४१ वा 'प्लवंग' संवत्सर है।

[१३] वेद

१. ऋग्वेद २. यजुर्वेद ३. सामवेद ४. अथर्ववेद।

(सं. छात्रोपयोगी)—वेद भारतीय संस्कृति में अपूर्व एवं अक्षय-निधि है। यह एक प्राचीनतम सर्वाधार और संमान्यतम ग्रंथ है। इसकी प्राचीनता को पाश्चात्यमनीषी भी स्वीकार करते हैं। अस्तु, यह वेद 'अपौरुषेय' एवं 'स्वतः प्रमाण' है अर्थात् यह किसी पुरुष के द्वारा रचित नहीं है, ऐसा सभी शास्त्रकार मानते आये हैं। इस विषय में पूर्वमीमांसा-शास्त्र में बहुत ही विस्तृत विचार करके वेद अपौरुषेय ही है—यह निर्णय किया गया है।

केवल तर्कशास्त्री लोग इसे मान्यप्रमाण मानते हुए भी परमपुरुष ईश्वरप्रणीत है, अत एव 'पौरुषेय' एवं 'परतः प्रमाण' (परीक्षा करके प्रमाण मानने योग्य) मानते हैं। तर्कशास्त्रियों का कथन है कि वेद को 'अपौरुषेय' माननेवाले शास्त्रकार समझते हैं कि पुरुष में भ्रम (विपरीत समझना), प्रमाद (पूरा ध्यान न देना, लापरवाही), विप्रलिप्सा (धोखा देने की इच्छा), एवं करणापाटव (इंद्रियों में कुशलता का अभाव) आदि दोष

देखे जाते हैं, इसीलिये वेद को 'पौरुषेय' मानने पर इनमें से एक, अनेक या सभी दोषों की आशंका बनी रहती है, पर हम वेद की रचना ऐसे सर्वज्ञ एवं निर्दोष परमात्मा से मानते हैं जिससे उसमें किसी दोष की कोई संभावना कतई (सर्वथा) नहीं रह जाती।

वेद चार होते हुए भी अनंत हैं। भगवान नारायण ने–द्वापरयुग में यह समझकर कि कलियुगमें आयु, बुद्धि तथा श्रद्धा आदिकी कमी के कारण इतने बड़े ग्रंथ का अध्ययन नहीं हो सकेगा–पराशर ऋषि से उनकी पत्नी सत्यवती के गर्भ में से अवतीर्ण (प्रगट) होकर इन वेदों का विभाग करके शिष्यों में वितरित किया। इसी लिए इनका नाम 'वेदव्यास' सार्थक होकर प्रसिद्ध है।

दिव्यज्ञानियों ने पहले ही देखा कि कलियुग में इस वेदको पढ़कर ब्राह्मण धर्म तथा अधर्म का निर्णय नहीं कर सकेंगे। अतः उन्होंने वेदों का मनन कर सरल संस्कृत भाषामें 'स्मृतियाँ' बनाईं। इनमें सर्व-संमानित मनुस्मृति, पराशरस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति आदि प्रसिद्ध हैं।

वेद की संस्कृत भाषा बहुत कठिन है। उसमें उदात्त आदि स्वर भी रहते हैं। वैदिक व्याकरण—'प्रातिशाख्य' नाम से बहुत अंश में लौकिक संस्कृतव्याकरण से भिन्न है। सायणाचार्य ने वेदपर भाष्य बनाया। 'उवट' 'महीधर' आदि विद्वानोंने भी वेद पर भाष्य लिखे हैं, जो विज्ञ मनीषियों को ही गम्य हैं। वेद का एक नाम 'त्रयी' भी है। अर्थात् चौथे अथर्व वेद में अन्य तीन वेदों के ही मंत्र हैं—अतः उसकी इन तीनों में ही मानकर यह संज्ञा दी गई है।

[१३ क] ६ वेदाङ्ग

(केवल सं० छा० उपयोगी)

शिक्षा व्याकरणं छन्दो निरुक्तं ज्यौतिषं तथा।
कल्पश्चेति षडङ्गानि स्मृतानि ऋषिभिः पुरा॥

(१) शिक्षा—जिस ग्रन्थ में वर्ण, स्वर, उदात्त, अनुदात्त, स्वरित एवं 'प्रचय', मात्रा (ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत--इस प्रकार का कालनियम), बल (स्थान-प्रयत्न), साम (साम्य=अतिशीघ्रता, अतिविलम्ब तथा गाने के ढंगसे उच्चारण आदि दोषरहित एवं माधुर्य=अक्षरस्पष्टता आदि गुणों से युक्त उच्चारण) सन्तान (संहिता=अक्षरोंका योग्य सामीप्य) इनके सम्बन्धमें उपदेश हो वह 'शिक्षा' है।

(२) व्याकरण—प्रकृति प्रत्यय आदि के उपदेश में पदके स्वरूप तथा उसके अर्थनिश्चय में सहायता करनेवाला वेदांग 'व्याकरण' है। व्याकरण का प्रयोजन 'रक्षोहागमलघ्वसन्देहाः' अर्थात् वेद की 'रक्षा'। 'ऊह'=कल्पना करना (प्रसंगानुसार लिंग विभक्ति आदि को व्याकरण नहीं जानने वाला यथोचित परिवर्तन नहीं कर सकता)। 'आगम' सांगवेदाध्ययन भी व्याकरण ज्ञान से ही संपन्न होगा। 'असन्देह' शब्दों के निर्णय के लिए भी व्याकरण आवश्यक है। अतः वेदांगों में भी व्याकरण का स्थान मुख अर्थात् प्रधान है।

(३) छन्दः—वेद में 'गायत्री' 'उष्णिक्' आदि छन्द हैं, उनका ज्ञान २४ अक्षरवाली 'गायत्री' २८ अक्षरवाली 'उष्णिक्' यह छन्दो-ग्रंथ से ही होगा।

(४) निरुक्त—शब्द के अर्थज्ञान में व्याकरण आदि की अपेक्षा न करते हुए अर्थका प्रकाशन 'निरुक्त' ग्रंथ करता है। 'यस्माच्चण्डञ्च मुण्डञ्च गृहीत्वा त्वमुपागता। चामुण्डेति ततो लोके ख्याता देवी भविष्यसि' यहाँ 'चामण्डा' शब्द का निर्वचन व्याकरणादि की अपेक्षा न करते हुए किया गया है।

(५) ज्योतिष—यज्ञ के समय को जानने के लिए 'ज्योतिष' अत्यंत आवश्यक है, अतः ज्योतिष का स्थान वेदांगों में नेत्र है।

(६) कल्प—यज्ञ प्रयोग जिस ग्रन्थ में समर्थित किया जाता है (कल्प्यते = समर्थ्यते यागप्रयोगोऽत्र इति कल्पः) वह वेदांग 'कल्प' है। आश्वलायन, बौधायन तथा आपस्तम्ब आदि के सूत्रों को 'कल्प' कहते हैं। कल्पसूत्र मन्त्रों का विनियोग बताकर यज्ञ के अनुष्ठान में उपकार करते हैं।

छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते।
ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते॥
शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्।
तस्मात् साङ्गमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते॥

[१४] आठ दिशाएँ

१. पूर्व दिशा
२. आग्नेय (कोण) विदिशा
३. दक्षिण दिशा
४. निर्ऋति या नैर्ऋत्य (कोण) विदिशा
५. पश्चिम दिशा
६. वायव्य (कोण) विदिशा
७. उत्तर दिशा
८. ईशान (कोण) विदिशा

ये आठ दिशाएँ हैं, इनमें ४ कोण या विदिशा कहे जाते हैं। ऊर्ध्व तथा अधः (ऊपर और नीचे) को भी मिलाकर १० दिशा भी कहते हैं।

[१५] आठ दिशाओं के स्वामी देवता एवं ग्रहों का स्थान

इन्द्रो वह्निः पितृपतिः नैर्ऋतो वरुणो मरुत्।
कुबेर ईशः पतयः पूर्वादीनां दिशां क्रमात्॥

१. इन्द्र	२. अग्नि	३. यम	४. नैर्ऋत
५. वरुण	६. वायु	७. कुबेर	८. ईशान या ईश्वर

रविः शुक्रो महीसूनुः स्वर्भानुर्भानुजो विधुः।
बुधो बृहस्पतिश्चेति दिशां चैव तथा ग्रहाः॥

१. रवि २. शुक्र ३. मंगल ४. राहु
५. शनैश्चर ६. चंद्रमा ७. बुध ८. बृहस्पति

[१६] ७ मोक्षपुरियाँ

अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची ह्यवन्तिका।
पुरी द्वारवती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः॥

१. अयोध्या (उ० प्र०)
२. मथुरा (उ० प्र०)
३. माया (हरिद्वार, उ० प्र०)
४. काशी (उ० प्र०)
५. कांची (दक्षिण भारत में)
६. उज्जैन (म० प्र०)
७. द्वारिकापुरी (गुजरात)

इन ७ तीर्थस्थानों में साधना करनेवाले शीघ्र ही ज्ञान पाते हैं एवं ज्ञान के द्वारा मोक्ष (संसारके आवागमन से छूटना) को प्राप्त करते हैं।

[१७] सात प्रसिद्ध नदियाँ

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥

१. गंगा (उ० प्र०)
२. यमुना (उ० प्र०)
३. गोदावरी (दक्षिण भा०)
४. सरस्वती (पंजाब)
५. नर्मदा (म० प्र०)
६. सिन्धु (कराची-पाकिस्तान)
७. कावेरी (दक्षिण भा०)

(कहीं भी स्नान करते समय इन नदियों का स्मरण किया जाता है।)

[१८] ४ धाम (भगवान् के नित्यवासस्थान)

बदरी द्वारिका चैव पुरी रामेश्वरं तथा।
धामान्येतानि देवस्य यत्रेशः सर्वदा स्थितः ॥

१. बदरी, बदरीधाम (उ० प्र०), २. द्वारिका (गुजरात), ३. पुरी (उत्कल), ४. सेतुबंध रामेश्वर (तामिलनाड द० भारत)

[१९] १४ लोक

ऊपर के लोक	नीचे के लोक
१. भूर्लोक (मर्त्यलोक)	८. अतल
२. भुवर्लोक	९. वितल
३. स्वर्लोक	१०. सुतल
४. महर्लोक	११. तलातल
५. जनोलोक	१२. महातल
६. तपोलोक	१३. रसातल
७. सत्यलोक	१४. पाताल

मर्त्यलोक, स्वर्ग तथा पाताल—इन तीनों को मिलाकर 'त्रिलोक' भी कहते हैं।

[२०] साल में मुख्य व्रत-उत्सव

१. वर्ष प्रतिपदा, नया साल (चैत सुदी परवा) तथा धुरड्डी (चैतवदी परवा)।
२. यम द्वितीया, भैयादूज (कार्तिक सुदी दूज)।
३. अक्षयतृतीया (वैशाख शुक्ल तृतीया)।
४. गणेश चतुर्थी (भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी)।
५. नागपंचमी (श्रावण शुक्ल पंचमी)।

६. चंपाषष्ठी (मार्गशीर्ष शुक्ल षष्ठी)।
७. रथसप्तमी (माघशुक्ल सप्तमी)।
८. श्रीकृष्ण जन्माष्टमी (भाद्रपद कृष्ण अष्टमी)।
९. महानवमी (नवरात्रकी आश्विन शुक्ल नवमी) तथा श्रीरामनवमी (चैत्रशुक्ल ९)।
१०. विजयादशमी (आश्विन शुक्ल दशमी)।
११. हरिशयनी एकादशी (आषाढ शुक्ल एकादशी) तथा रंगभरी एकादशी (फाल्गुन शुक्ल ११)।
१२. उत्थान द्वादशी (देवोत्थान कार्तिक सुदी १२)।
१३. धनतेरस (कार्तिक शुक्ल १३)।
१४. अनंत चतुर्दशी (भाद्रपक्ष शुक्ल १४) तथा नरकचतुर्दशी (कार्तिककृष्ण १४)।
१५. उपाकर्म-श्रावणी (श्रावण शु० पूर्णिमा) तथा होलिकादहन (फागुन सुदी १५)।
१६. सर्वपितृ अमावास्या (आश्विन कृष्ण अमावस्या) तथा दीपावली (कार्तिक कृष्ण अमा)।

[२१] पंचदेवता

१. सूर्य २. गणपति ३. दुर्गा (शक्ति)
४. विष्णु ५. शिव।

[२२] ५ देवों के उपासकों के नाम

१. सौर (सूर्य की पूजा आराधना करनेवाले)
२. गाणपत्य (गणपति की पूजा आराधना करनेवाले)
३. शाक्त (दुर्गा की पूजा आराधना करनेवाले)
४. वैष्णव (विष्णु की पूजा आराधना करनेवाले)

५. शैव (शिव की पूजा आराधना करनेवाले)

ॐ पाँचों देवताओं को एक साथ रखकर पूजा आराधना करने-वाले 'स्मार्त' कहलाते हैं।

[२३] पञ्चदेवों के प्रिय पुष्प

१ सूर्य भगवान को अत्यंत प्रिय लाल अडहुल का फूल।
२ गणपति को दूर्वा (दूब) अत्यत प्रिय है।
३ दुर्गाजी को अत्यंत प्रिय लाल अडहुल है
४ विष्णु भगवान् को प्रधानतया तुलसी प्रिय है।
५ शिवजी को अत्यंत प्रिय बिल्व पत्र है।

[२४] ४ वर्ण ४ आश्रम

४ वर्ण		४ आश्रम	
१. ब्राह्मण	२. क्षत्रिय	१. ब्रह्मचर्य	२. गृहस्थ
३ वैश्य	४. शूद्र	३. वानप्रस्थ	४. सन्यास

(संस्कृत छात्रोपयोगी)

इन चार जातियों में ब्राह्मण को छह कर्मों में अधिकार है। वे कर्म—

१. अध्ययन	वेद पढ़ना
२. अध्यापन	वेद पढ़ाना
३. यजन	यज्ञ करना
४. याजन	यज्ञ कराना
५. दान	दान देना
६. प्रतिग्रह	दान लेना

अतः ब्राह्मण 'षट्कर्मा' कहलाते हैं। क्षत्रिय और वैश्यको 'त्रिकर्मा' कहते हैं। उनका अध्ययन, यजन तथा दान इन ३ कर्मों में अधिकार है। ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य इन तीनों को 'द्विज' एवं 'त्रिवर्ण' कहते

हैं। ये तीनों वर्ण या जाति माता के गर्भ से और उपनयन संस्कार से जन्म लेते हैं, अतः दो बार जन्म लेने से 'द्विज' (द्विः जायते इति) कहलाते हैं।

[२५] त्रिवर्णों के मुख्य संस्कार

१. जात कर्म
२. नाम करण
३. अन्न प्राशन
४. चौल (मुंडन)
५. उपनयन (जनेऊ)
६. वेदव्रत (वेदाध्ययन)
७. स्नान (अर्थात् गुरुगृह में अध्ययन के समय की दीक्षा से निवृत्ति)।
८. विवाह

[२६] नवरस

शृंगार, वीर, करुण, अद्भुत, हास्य, भयानक, बीभत्स, रौद्र और शांत ये नौ रस हैं।

[२७] षड् (छह) रस

कषाय (कसैला), मधुर (मीठा), लवण (नमकीन), कटु (कड़ुआ), तिक्त (तीता), एवं अम्ल (खट्टा) ये छः रस हैं।

[२८] विष्णु भगवान् के दस अवतार और उनके काम

अवतार	काम
१. मत्स्य	वेदोद्धार
२. कूर्म	समुद्रमथन काल में मंदराचलका धारण
३. वराह	हिरण्याक्षवध
४. नरसिंह	हिरण्यकशिपु वध

५. वामन	बलि चक्रवर्ती से त्रिलोकैश्वर्य छीनकर देवेंद्र को देना
६. परशु राम	दुष्ट क्षत्रियों का २१ बार संहार करना
७. राम (अयोध्या में)	रावण कुंभकर्ण आदि का संहार
८. कृष्ण (मथुरा में)	शिशुपाल-दंतवक्त्रों का संहार, कौरव विनाश आदि ।
९. बुद्ध (कपिलवस्तु-लुंबिनीवन)	धर्मचक्रप्रवर्तन
१०. कल्की (उड़िसा में शंभल ग्राम)	धर्मस्थापना

❀ इन १० अवतारों में 'कृष्णावतार पूर्णकला' का है अर्थात् इस अवतार में भगवान् ने अत्यधिक शक्ति को प्रकट किया है। सभी अवतारों में पूर्णकला और पूर्णसामर्थ्य रहते ही हैं, उनका प्रकाशन केवल आवश्यकतानुसार ही होता है। कृष्णावतार में 'ऐश्वर्य', 'माधुर्य' और 'ज्ञानशक्ति' का यथोचित पूर्ण प्रकाशन होने के कारण उस अवतार को 'पूर्णावतार' ऐसा कतिपय वैष्णव मनीषी मानते हैं। इनमें १० वाँ अवतार कलियुग के चौथे चरण में अधर्म-अन्याय का अत्यधिक प्रसार होने पर उड़िसा में होगा। अभी कलियुग का प्रथम चरण है।

[२९] ६ शास्त्र एवं उनके प्रवर्तक आचार्य

कपिलस्य कणादस्य गौतमस्य पतञ्जलेः।
जैमिनेश्चैव व्यासस्य दर्शनानि षडेव हि ॥

१. सांख्य शास्त्र	कपिलमुनि
२. योग शास्त्र	महर्षि पतंजलि
३. वैशेषिक शास्त्र	कणादमुनि
४. तर्क (न्याय) शास्त्र	गौतम
५. पूर्व मीमांसा	जैमिनि
६. वेदान्तशास्त्र (उत्तरमीमांसा)	वेदव्यास भगवान्

[सं० छा० उपयोगी—केवल रामानुजाचार्यजी के संप्रदायानुयायी (विशिष्टाद्वैती वैष्णव) इन छह शास्त्रों को तीन ही शास्त्र मानते हैं। सांख्य-योगों को वैशेषिक-तर्कशास्त्रों को एवं पूर्वोत्तर मीमांसाओं का एक मानकर 'त्रिशास्त्र' ही है ऐसा कहते हैं।]

(संस्कृत छात्र उपयोगी)

[३०] मुख्य १० उपनिषदों के नाम

ईश-केन कठ-प्रश्न-मुण्ड-माण्डूक्यसंज्ञिकाः।
तैत्तिरीयैतरेये च छान्दोग्यारण्यका दश॥

१ ईशावास्य उपनिषद्	२ केन उपनिषद्
३ कठ ,,	४ प्रश्न ,,
५ मुंडक ,,	६ मांडूक्य ,,
७ तैत्तिरीय ,,	८ ऐतरेय ,,
९ छांदोग्य ,,	१० बृहदारण्यक ,,

उपनिषद् को 'रहस्यार्थ प्रतिपादक' भी कहते हैं। 'ब्रह्मविद्या' ही रहस्यार्थ है। 'उपनिषद्' और 'ब्रह्मविद्या' शब्दों का पर्याय रूप से प्रयोग हुआ है।

[३१] चार पुरुषार्थ

१ धर्म	२ अर्थ	३ काम	४ मोक्ष

मनुष्य अपने जीवन में जो भी चाहता है वे ये ही ४ पदार्थ हैं।

[३२] १८ पुराण

१ ब्राह्म पुराण	२ पद्म पुराण	३ विष्णु पुराण
४ शिव पुराण	५ लिंग पुराण	६ गरुड पुराण

७ नारद पुराण	८ भागवत पुराण	९ अग्नि पुराण
१० स्कंद पुराण	११ भविष्य पुराण	१२ ब्रह्मवैवर्त
१३ मार्कण्डेय	१४ वामन	१५ मत्स्य
१६ कूर्म	१७ वाराह	१८ ब्रह्माण्ड

इतिहास—रामायण, एवं महाभारत

१८ पुराणों एवं महाभारत के रचयिता भगवान् श्री वेदव्यासजी हैं। रामायण के रचयिता श्रीवाल्मीकि जी हैं। रामायण को 'प्रबन्ध' भी कहते हैं।

[३३] ५ वेदांत (मोक्षका उपाय बतानेवाले शास्त्र)

१ अद्वैत वेदांत २ विशिष्टाद्वैत वेदांत ३ शुद्धाद्वैत वेदांत
४ द्वैताद्वैत वेदांत ५ द्वैत वेदांत।

५ वेदांतों के आचार्य और उनके स्थान

१ शंकराचार्य	(मलयालम्-केरल)
२ रामानुजाचार्य	(तामिलनाड)
३ वल्लभाचार्य	(तेलुगु–आंध्र)
४ निंबार्काचार्य	(तेलुगु–आंध्र)
५ मध्वाचार्य	(तुलु–कन्नड मैसूर)

इन पाँच आचार्योंने ब्रह्मसूत्र, उपनिषद् (दस मुख्य ईशादि उपनिषद्) एवं श्रीमद्भगवद्गीता पर भाष्य रचकर उपर्युक्त पाँच मतों या सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है। इन तीन ग्रन्थों को 'प्रस्थानत्रयी' कहते हैं। दक्षिण भारतमें शुद्धाद्वैत-द्वैताद्वैत मत का प्रचार कम है, अतः बाकी 'अद्वैती', 'विशिष्टाद्वैती' एवं 'द्वैती' ब्राह्मणों को एक शब्द में 'त्रिमतस्थ' कहते हैं।

(३४) ६ ज्ञानेन्द्रिय और उनके विषय

मनः कर्णस्तथा नेत्रं रसना च त्वचा सह।
नासिका चेति षट् खानि धीन्द्रियाणि प्रचक्षते॥
रूपं शब्दस्तथा गन्धः रसः स्पर्शश्च पञ्चमः।

तैजस	१ आँख	रूप (काला पीला आदि)
आकाशीय	२ कान	शब्द (वर्णात्मक एवं ध्वन्यात्मक)
पार्थिव	३ नाक	गंध (सुगंध और दुर्गंध)
जलीय	४ जीभ	रस (खट्टा, मीठा आदि छः)
वायवीय	५ त्वचा	स्पर्श (ठंडा, गरम एवं समशीतोष्ण)

६ मन—आंतरिक सुख दुःख आदि को बतलाने वाला 'अन्तरिन्द्रिय' कहलाता है। मनका संपर्क हुए विना किसी तरह का ज्ञान ही नहीं होता है, अतः मन को पाँच ज्ञानेन्द्रिय एवं कर्मेन्द्रिय 'उभयात्मक' अर्थात् ज्ञानेन्द्रिय-कर्मेन्द्रियरूप है—ऐसा भी दर्शनों का मत है।

[३५] ५ कर्मेन्द्रिय तथा उनका काम

वाक् चैव पाणिपादञ्च उपस्थं पायुरेव च।
भाषणादानसञ्चाराः प्रस्रावमलनिर्गमाः॥

१ वाग्	बोलना,	२ हाथ	लेना-देना,
३ पाँव	चलना-फिरना,	४ मूत्रेंद्रिय	पेशाब करना,
५ गुदा	मल त्यागना,		

[३६] छह भीतरी शत्रु

१ काम	इच्छा-चाह	२ क्रोध	गुस्सा
३ लोभ	लालच	४ मोह	चित्तका विकृत होना

५ मद	घमंड	६ मात्सर्य	जलन-दूसरे की उन्नति को न देख सकना।

ये छः भीतर के दुश्मन हैं। नीतिकारों ने एक और शत्रु को बताया है—

"आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपुः।"
आलस्य-सुस्ती शरीर में रहनेवाला बड़ा दुश्मन है।

[३७] ५ महाभूत

१ पृथिवी   २ जल   ३ तेज   ४ वायु   ५ आकाश।

[३८] अष्ट सिद्धियाँ

१ अणिमा	छोटे से छोटा होना
२ महिमा	बड़े से बड़ा होना
३ गरिमा	अत्यधिक भारी हो जाना
४ लघिमा	अत्यधिक हल्का होना
५ प्राप्ति	पहूँचना जहाँ इच्छा हो
६ प्राकाम्य	सब प्रकार से पूर्णता का अनुभव करना
७ ईशित्व	समर्थ होना (अपनी आज्ञा की सर्वत्र गति)
८ वशित्व	वश कर लेना

[३९] नव निधियाँ

१ महापद्म	२ पद्म	३ शंख
४ मकर	५ कच्छप	६ मुकुन्द
७ कुन्द	८ नील	९ खर्व।

[४०] सप्त (७) समुद्र

१ लवण समुद्र (खारा)
२ इक्षुरसोद (ईख का रस)
३ सुरोद (मद्य जल)
४ घृतोद (घी)
५ क्षीरोद (दूध)
६ दधिमंडोद (दही)
७ स्वादूदक (मीठा जल)

पूर्व समुद्र, दक्षिण समुद्र, पश्चिम समुद्र, उत्तर समुद्र—इस प्रकार '४ समुद्र' भी कहते हैं।

[४१] ४ प्रकार के जीव

१ स्वेदज—पसीने से उत्पन्न होनेवाले कृमि-जोंक आदि।
२ जरायुज—पशु, मनुष्य आदि गर्भाशय से उत्पन्न होनेवाले।
३ अंडज—पक्षी सर्प आदि अंडे से उत्पन्न होने वाले।
४ उद्भिज्ज—पेड़ पौधे आदि जमीन को फोड़कर उत्पन्न होनेवाले।

[४२] ३ अवस्थाएँ

१ बाल्य—बचपन, २ यौवन—जवानी, ३ वार्धक्य—बुढ़ापा।

[४३] भारतवर्ष में प्रचलित मुख्य धर्म

१. सनातन वैदिक धर्म (हिंदू धर्म), यही अधिक प्रचलित है।
२. बौद्ध धर्म
३. जैनधर्म
४. सिखधर्म
५. इस्लाम धर्म
५. ईसाई धर्म।

[४४] हिंदी की वर्णमाला

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ए ऐ ओ औ अं अः
(ये बारह स्वर अथवा 'अच्' वर्ण या अक्षर कहे जाते हैं)

१. अनुस्वार ' ं ' २. विसर्ग ' : ' ३. चन्द्रबिन्दु ' ँ ' इत्यादि वर्णों को संस्कृत में 'अयोगवाह' कहते हैं।

क ख ग घ ङ (कवर्ग)
च छ ज झ ञ (चवर्ग) य र ल व–ये ४ अंतस्थवर्ण
ट ठ ड ढ ण (टवर्ग) श ष स ह –ये ४ ऊष्मवर्ण
त थ द ध न (तवर्ग) क्ष त्र ज्ञ
प फ ब भ म (पवर्ग)

ये ३६ 'व्यंजन' अथवा 'हल्' वर्ण कहे जाते हैं। (संस्कृत भाषा में क्+ष=क्ष, त्+र=त्र, ज्+ञ=ज्ञ, ये संयुक्ताक्षर हैं न कि स्वतंत्र अक्षर)

[४५] ४ युग और उनका कालमान

कृत या सत्य	१७,२८००० वर्ष प्रमाण
त्रेता	१२,९६००० वर्ष प्रमाण
द्वापर	८,६४००० वर्ष प्रमाण
कलि	४,३२००० वर्ष प्रमाण

ये चार युग हैं।

[४६] सांकेतिक अंक

१. भूमि, इंदु २. नेत्र, पक्ष
३. गुण, अग्नि, राम ४. समुद्र, वेद, युग
५. बाण, भूत, इन्द्रिय ६. रस, ऋतु, अंग
७. ऋषि, स्वर, पर्वत मुनि, अश्व ८. वसु, सर्प, गज
९. संख्या, नंद, रंध्र निधि, ग्रह १०. दिशा। ० (शून्य) आकाश
११. रुद्र, १२. सूर्य
१३. विश्वेदेव १४. मनु, भुवन
१५. तिथि १६. कला

[४७] शिशुरूपी श्रीराम की प्रार्थना

भये प्रकट कृपाला दीनदयाला कौसल्याहितकारी।
हरषित महतारी मुनिमनहारी अद्भुत रूप बिचारी॥
लोचन अभिरामा तनुघनस्यामा निज आयुध भुज चारी।
भूषन वनमाला नयन बिसाला सोभासिंधु खरारी॥
कह दुइ करजोरी अस्तुति तोरी केहि बिधि करौं अनंता।
माया गुन ग्यानातीत अमाना वेद पुरान भनंता॥
करुना सुख सागर सब गुन आगर जेहि गावहिं श्रुतिसंता।
सो मम हितलागी जन अनुरागी भयउ प्रगट श्रीकंता॥
ब्रह्मांड निकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति वेद कहै।
मम उर सो बासी यह उपहासी सुनत धीर मति थिर न रहै॥
उपजा जब ग्याना प्रभु मुसुकाना चरित बहुत विधि कीन्ह चहै।
कहि कथा सुहाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै॥
माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा।
कीजै सिसु लीला अतिप्रियसीला यह सुख परम अनूपा॥
सुनि वचन सुजाना रोदन ठाना होइ बालक सुरभूपा।
यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं ते न परहिं भवरूपा॥

बिप्र धेनु सुर संत हित, लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु, माया गुन गोपार॥

तुलसीकृत

—रामचरितमानस से—

(४८) धर्म एवं अधर्म

वेद तथा वेद के अनुसार ही चलनेवाले शास्त्रों ने जिन कामों को करने की आज्ञा दी है वही धर्म हैं। जैसे 'सत्य बोलो' 'गुरु का आदर करो' इत्यादि 'सत्य बोलना' 'गुरु का आदर करना' आदि धर्म है।

जिन कार्यों का निषेध (मनाही) किया गया है उन्हें अधर्म कहते हैं। जैसे 'झूठ मत बोलो' 'हिंसा (दूसरे को कष्टदेना-मारना) मत करो' इत्यादि झूठ, हिंसा आदि अधर्म हैं। धर्म को पुण्य और अधर्म को पाप भी कहते हैं। धर्म के आचरण से ही मनुष्य को सुख प्राप्त होता है एवं अधर्म के आचरण (करने) से दुःख प्राप्त होता है।

(संस्कृत छात्रोपयोगी-वेदविहित कर्माचरण से एक 'अपूर्व' (मीमांसकों के मतसे) या 'अदृष्ट' (वैशेषिकों के मत से) उत्पन्न होता है, जो मनुष्य को स्वर्ग आदि सुख दिलाता है। उस अच्छे कर्म के यहीं नष्ट होने पर भी अपूर्व या अदृष्ट साथ होने के कारण कर्मकर्ता को स्वर्ग आदि फल अपने समयपर मिल ही जाता है।

[४९] भगवान् के कुछ नाममंत्र

१. हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥ (षोडशनाममंत्र)

२. हर हर महादेव शंभो काशी विश्वनाथ (गंगा) सांबा।

३. श्रीकृष्ण गोविंद हरे मुरारे हे नाथ नारायण वासुदेव।

४. श्रीराम जयराम जय जय राम (पंचदशाक्षर मंत्र)।

५. गोविंद गोविंद हरे मुरारे गोविंद गोविंद रथाङ्गपाणे।
गोविंद गोविंद मुकुंद कृष्ण गोविन्द गोविन्द नमो नमस्ते ॥

६. हर शंभो महादेव विश्वेशामरवल्लभ।
शिव शंकर सर्वात्मन् नीलकंठ नमोऽस्तु ते ॥

७. शिवं शिवकरं शांतं शिवात्मानं शिवोत्तमम्।
शिवमार्गप्रणेतारं प्रणमामि शिवं सदा ॥

८. श्रीकृष्णः शरणं मम।

९. रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे।
रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः ॥
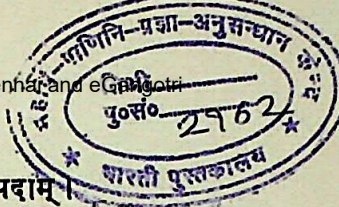
१०. आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम्।
लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम्।

११. आर्तानाम् आर्तिहन्तारं भीतानां भयनाशनम्।
द्विषदां कालदण्डं तं रामचन्द्रं नमाम्यहम्॥

१२. रघुपति राघव राजाराम पतित पावन सीताराम।

१३. जय दुर्गे ! जय दुर्गे जय देवि नमोऽस्तु ते।

[५०] प्रत्येक हिंदू का कर्तव्य

(१) सूर्योदय से पहले ही उठकर कुछ देर भगवान् का नाम ले, इसी प्रकार सायंकाल भी। इस पुस्तक में आरंभ में ही कुछ पद्य इसके लिये दिए गए हैं।

(२) स्नान करके चंदन, गोपी चंदन, भस्म अथवा रोरी से भाल में तिलक धारण करे।

(३) घरमें भगवान् की मूर्ति अथवा चित्र ही रखकर प्रतिदिन सायं प्रातः उसके पास दीपक एवं धूपबत्ती जलावे और उस पर फूल माला चढ़ाए।

(४) प्रतिदिन स्नान किए बिना कुछ आहार न लें।

स्नान के बाद सूर्य को ३ अंजलि फूल चंदन से मिला हुआ पानी अर्घ्य दें। उसके लिये यह मंत्र है—

एहि सूर्य सहस्रांशो, तेजोराशे जगत्पते।
अनुकम्पय मां भक्त्या गृहणार्घ्यं दिवाकर॥

(५) भोजन तैयार होने पर "त्वदीयं वस्तु गोविंद ! तुभ्यमेव समर्पये" यह मंत्र उच्चारण कर मन से भगवान् को अर्पण करे।

(६) अपने खाने के पहले एक कौर 'गो-ग्रास' गाय को दें।

(७) मास में दो एकादशियों में दूध-शाग-फलसे आहार का काम लें यदि संभव हो तो कुछ भी न लें, निराहार रहें।

(८) भोजन का पदार्थ यथासंभव सादा और सात्विक हो। अधिक मिर्च मसाला प्याज आदि तामस वस्तु का उपयोग न करें। न्याय रीति से कमाए हुए पैसे का खरीदा-जुटाया अन्न हो।

(९) शिवरात्रि—प्रदोष–कृष्णजन्माष्टमी–रामनवमी आदि आदि पर्व-दिनोंमें व्रत रहकर पूजा आदि करे। पंचांग से इन दिनों को समझ ले।

(१०) मादक पदार्थों (मद्य–भांग चरस आदि) से दूर रहें। इनके सेवन करने वालों से मित्रता या संगति न करे।

(११) मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्।
आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पण्डितः॥

जो परस्त्रियों को माता के समान देखता है दूसरे के द्रव्य को मट्टीके ढेले के समान देखता है, सभी प्राणियों को अपनी आत्मा के समान देखता है वही पंडित है।

(१२) माता को देवता माने, पिताको देवता माने।
गुरु को देवता माने, अतिथि को देवता माने॥

[५१] हिंदूधर्म के मौलिक ११ सिद्धांत

(१) परमेश्वर-परमात्मा को सर्वशक्तिमान् सर्वव्यापक एवं जगत् का कर्ता धर्ता मानना।

(२) "जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः, ध्रुवं जन्म मृतस्य च" (गीता)
जो पैदा होता है वह अवश्य ही मरता है और मरे हुए का पुनः जन्म लेना भी निश्चित है।

(३) "अवश्यम् अनुभोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।
नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि॥"

किये हुए अच्छे या बुरे कर्म का फल निश्चित ही भोगना पड़ेगा। किया हुआ कर्म फल भुगाये विना करोड़ों वर्ष बीतने पर भी क्षीण (नष्ट) नहीं होता।
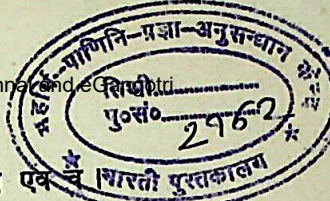
(३) अच्छेद्योऽयम् अदाह्योऽयम् अक्लेद्योऽशोष्य एव च।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः ॥ श्रीमद्भगवद्गीता,

यह आत्मा काटे नहीं कटता है, न जलाया जा सकता है और न गलाया ही जा सकता है। वह नित्य है सब (शरीर) में रहने वाला है, अचल है कूटस्थ (शिखर की भाँति) सर्वदा रहने वाला है।

(४) वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥

जैसे मनुष्य पुराने कपड़ों को छोड़कर नये वस्त्रों का ग्रहण करता है उसी प्रकार जीर्ण (पुराने) शरीरों को छोड़कर नवीन देहों का ग्रहण करता है। इसे ही 'संसार' या 'आवागमन' कहते हैं।

(५) कर्ता कारयिता चैव प्रेरकश्चानुमोदकः।
शोभनेऽशोभने चैव चत्वारः समभागिनः ॥

अच्छे या बुरे कार्य के ये चारों समानरूपसे भागी (हिस्सेदार) हैं—काम करनेवाला, काम करानेवाला, प्रेरणा करनेवाला एवं अनुमोदन ('ठीक हुआ' 'अच्छा हुआ' कहना) करनेवाला।

(६) आदित्यचन्द्रावनिलोऽनलश्च द्यौर्भूमिरापो हृदयं यमश्च।
अहश्च रात्रिश्च उभे च सन्ध्ये धर्मश्च जानाति नरस्य वृत्तम् (श्रीमद्भागवत)

आदित्य, चंद्र, वायु, अग्नि, आकाश, भूमि, जल, हृदय, यमधर्म-राज, दिन, रात, प्रातः संध्या, सायं संध्या, धर्म ये प्रत्येक मानव के सभी प्रकार के कर्मों के साक्षी हैं। अतः अत्यंत गुप्तरूप से अच्छा या बुरा कर्म करने पर भी उसका निश्चित फल योग्य समय में मिल ही जाता है।

(७) अष्टादश पुराणानि आलोड्य वचनद्वयम्।
परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम् ॥

अट्ठारहों पुराणों का मंथन करने पर ये दो बातें मिलती हैं कि दूसरे को उपकार करना पुण्य है–अच्छा है, और दूसरे को कष्ट देना पाप-बुरा है।

(८) भगवान इन आठ फूलों से पूजा करने पर प्रसन्न हो जाते हैं–

अहिंसा प्रथमं पुष्पम् पुष्पमिन्द्रियनिग्रहः।
सर्वभूतदया पुष्पम् सत्यपुष्पं विशेषतः॥
ज्ञानपुष्पं तपःपुष्पं क्रियापुष्पं तथैव च।
ध्यानं चैवाष्टमं पुष्पम् एभिस्तुष्यति केशवः॥

१ मन-कर्म-वचन से किसी को कष्ट न देना, २ अपनी इंद्रियाँ (आँख, कान, जीभ आदि) को अपने वश में रखना, मनमानी चलने न देना, ३ सब प्राणियों पर दया (उनके कष्ट को दूर करने का इच्छा) करना, ४ सत्यरूपी फूल विशेषरूप से, ५ ज्ञान (भगवान की महिमा का जानना,) ६ तपःपुष्प (सुखदुःख आदि को सहना), ७ क्रियापुष्प (कर्म करना, निठल्ले नहीं बैठना), ८ ध्यान-भगवान के मंगलमय रूप का चिंतन करना।

(९) 'स्वकर्मफलभुक् पुमान्' अपने किये का ही मनुष्य सुख या दुःख भोगता है। और लोग निमित्त मात्र हैं अतः उन्हें दोष नहीं देना चाहिये।

(१०) 'स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः' (श्रीगीता) अपना धर्मपालन करते हुए मर जाना भला है। दूसरे का धर्म डरावना है। स्वधर्म में पूर्ण विश्वास–निष्ठा रहनी चाहिये। मृत्यु आने पर भी धर्म-परिवर्त्तन नहीं करना चाहिये।

(११) सर्वेऽपि सुखिनः सन्तु, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत्॥

संसारभर के प्राणी सुखी हों, सभी नीरोग रहें, सभी मंगल ही मंगल देखें–कोई दुःख भोगने वाला न हो भगवान् ! शुभम्।